इकाई 11 वितरण का सीमांत उत्पादिता सिद्धांत एवं मज़दूरी का निर्धारण

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 उत्पादन के साधन

11.3 सीमांत उत्पाद की अवधारणाएँ

- 11.3.1 सीमांत भौतिक उत्पाद
- 11.3.2 सीमांत उत्पाद का मूल्य
- 11.3.3 सीमांत आगम उत्पाद

11.4 उत्पादन साधन की माँग

- 11.4.1 साधन की बाज़ार माँग

11.5 साधन आपूर्ति

- 11.5.1 साधन का प्रतिफल एवं उसकी आपूर्ति
- 11.5.2 पूर्ण उत्पाद वितरण प्रमेय
- 11.5.3 वस्तु बाज़ार की अपूर्णताएँ और साधन प्रतिफल एवं रोज़गार

11.6 वितरण के सीमांत उत्पादिता सिद्धांत की सीमाएँ

11.7 मज़दूरी निर्धारण

- 11.7.1 श्रम एवं श्रम की आपूर्ति
- 11.7.2 एक व्यक्ति द्वारा श्रम की आपूर्ति
- 11.7.3 श्रम की बाज़ार आपूर्ति

11.8 श्रम की अल्पकालीन माँग

- 11.8.1 श्रम बाज़ार : एक फर्म की श्रम की माँग मे श्रम की बाज़ार माँग का निर्धारण
- 11.8.2 श्रम की माँग की लोचशीलता

11.9 माँग एवं आपूर्ति : बाज़ार संतुलन

- 11.9.1 उत्पाद एवं श्रम, दोनों ही बाज़ारों में पूर्ण प्रतियोगिता

11.10 बाज़ार की अपूर्णताएँ तथा मज़दूरी की दर

- 11.10.1 वस्तु बाज़ार की अपूर्णताएँ
- 11.10.2 श्रम बाज़ार की अपूर्णताएँ
  - क) श्रमिक संघ
  - ख) एक नियोजक
  - ग) द्विपक्षीय एकाधिकार
- 11.10.3 सरकारी हस्तक्षेप

11.11 बाज़ार में अनेक प्रकार की मज़दूरी दरें क्यों प्रचलित होती हैं?

11.12 सारांश

11.13 शब्दावली

11.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.15 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत

11.0 उद्देश्य

यह इकाई आपको वितरण के सीमांत उत्पादिता सिद्धांत से परिचित कराती है। हम इस सिद्धांत की व्याख्या श्रम के पारिश्रमिक के निर्धारण के उद्धरण के माध्यम से कर रहे हैं। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इन बातों को समझ और समझा सकेंगे :

- किसी साधन की सीमांत उत्पादिता के विभिन्न माप;
- कीमत निर्धारण के सामान्य सिद्धांत के एक विशेष स्वरूप में, साधन कीमत का निर्धारण;
- पूर्ण प्रतियोगी बाज़ार व्यवस्था के अंतर्गत समग्र उत्पादन का पूरी तरह निकल विभक्त हो जाना;
- मज़दूरी दर की निर्धारण प्रक्रिया;
- श्रम बाज़ार में श्रमिक संघों के कार्य एवं राजकीय हस्तक्षेप के प्रभाव; तथा
- विभिन्न मज़दूरों की प्राप्तियों (मज़दूरी) में अंतर, आदि।

11.2 प्रस्तावना

हम जानते हैं कि सामाजिक उत्पादन समाज के सदस्यों की मेहनत का परिणाम होता है। समाज के सदस्य अपनी-अपनी तरह से उत्पादन प्रक्रिया में भागी बनते हैं। वे सभी अपने योगदान के बदले में कुछ प्रतिफल की अपेक्षा भी करते हैं। प्रश्न उठता है कि समग्र उत्पादन में व्यक्तियों के अंशभाग का निर्धारण किस प्रकार होना चाहिए? इन प्रश्न पर कई पीढ़ियों से अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, दार्शनिक एवं चिन्तक विचार करते रहे हैं एवं उन्होंने अनेक प्रकार के सुझाव प्रस्तुत किए हैं। सीमांत उत्पादिता सिद्धांत सामाजिक उत्पादन के वितरण की समस्या का एक व्यवहारिक समाधान है। यहाँ हम किसी साधन की सीमांत उत्पादिता एवं उसके प्रतिफल के बीच साम्य लाने का प्रयास करते हैं। बाज़ार की शक्तियाँ कुछ इस प्रकार कार्य करती हैं कि दीर्घकाल में अंततः प्रत्येक संसाधन का प्रतिफल उसकी उत्पादिता के अनुरूप ही रहता है। यही नहीं, उत्पादन एवं संसाधन बाज़ारों में पूर्ण स्पर्धा व्याप्त होने पर तो हमारा सीमांत उत्पादिता सिद्धांत समग्र उत्पादन के पूरे-पूरे विभक्त हो जाने को भी सुनिश्चित कर देता है। कभी-कभी तो यह भी दावा किया जाता है कि इस प्रकार का वितरण न्यायपूर्ण भी है। यद्यपि हमने सीमांत उत्पादिता सिद्धांत की अवधारणाएँ श्रम के संदर्भ में ही विकसित की हैं, फिर भी श्रम बाज़ार की विलक्षणताओं की ओर आपका ध्यान आकर्षित करने के लिए मज़दूरी के निर्धारण के बारे में चर्चा अलग से (भाग 11.7–11.11 में) की गई है।

11.2 उत्पादन के साधन

उत्पादन की गतिविधि में अनेक व्यक्तियों का सहयोग आवश्यक होता है। कुछ तो कार्यस्थान/फैक्टरी आदि में इकट्ठे मिलकर काम करते हैं। कुछ उस स्थान पर उपस्थित नहीं होते हुए भी उन फैक्टरियों की स्थापना में सहायक रहे होते हैं। कुछ लोग यंत्रों-संयंत्रों की खरीदारी तथा उनके लिए उपयुक्त भवनों के निर्माण के लिए पूँजी उपलब्ध कराते हैं। कुछ अन्य व्यक्ति श्रमिकों एवं मशीनों को एक साथ जुटाने का कार्य करते हैं। उन फैक्टरियों में उत्पादन करने के लिए कच्चे माल को जुटाने का कार्य कहीं ओर ही हो रहा होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज के युग में उत्पादन तभी संभव हो पाता है जबकि कोई श्रम, कच्चेमाल, भूमि तथा पूँजी को वस्तुओं का उत्पादन करने हेतु इकट्ठा करें। स्वाभाविक ही है कि व्यवस्था करने वाला संगठनकर्ता या उद्यमी ही यह तय करेगा कि उत्पादन किस चीज़ का हो। अर्थशास्त्र में इन सभी को–अर्थात् श्रम, भूमि, पूँजी एवं उद्यम को उत्पादन साधन कहते हैं। इनकी काम चलाऊ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं :

i) **भूमि**

यह प्रकृति से प्राप्त भौतिक संसाधन है। इसमें सभी खनिज, ठोस एवं जल संसाधन सम्मिलित रहते हैं

ii) **श्रम**

उत्पादन के इस सर्वोत्कृष्ट साधन में मानव के सभी प्रकार के भौतिक एवं बौद्धिक प्रयास शामिल होते हैं। श्रम प्रकृति से प्राप्त वस्तुओं को मानव आवश्यकताओं को पूरी करने वाली अन्य वस्तुओं में बदलता है।

iii) **पूँजी**

प्रकृति की देन को वस्तुओं में परिवर्तित करने के प्रयास में मानव समय पर कुछ पदार्थों को इस प्रकार बदलता-ढालता रहा है कि उसका वस्तु निर्माण कार्य और सहज हो सके। इन्हीं परिवर्तित स्वरूप के पदार्थों को प्रदान किया गया साझानाम *पूँजी* है। परंपरा से ही हम पूँजी को एक पृथक उत्पादक कारक मानते हैं।

iv) **उद्यम**

मौटे तौर पर, उत्पादन की व्यवस्था करने एवं जोख़िम उठाने की मानवीय योग्यता विशेष को उद्यम कहा जाता है।

नोट : आगे चलकर हम इन उत्पादक साधनों के स्वरूप का और परिमार्जन करेंगे। श्रम की विशेषताओं पर तो हम भाग 11.7.1 में और शेष कारकों, भूमि, पूँजी एवं उद्यम पर चर्चा इकाई 12 में करेंगे।

11.3 सीमांत उत्पाद की अवधारणाएँ

अन्य सभी साधनों की प्रयुक्त मात्राओं को पूर्ववत् रखते हुए, किसी एक साधन की एक अतिरिक्त इकाई के प्रयोग से उत्पादन में आई वृद्धि ही उस साधन का सीमांत उत्पाद कहलाता है। दूसरे शब्दों में, मान लो कि एक फैक्टरी में मशीनों की संख्या तो स्थिर है, पर हम एक श्रमिक और काम पर लगा लेते हैं, तो फिर इस अतिरिक्त श्रमिक के काम पर लगने से उत्पादन में हुआ परिवर्तन ही श्रम का सीमांत उत्पाद होगा। इसी प्रकार से हम किसी भी साधन के सीमांत उत्पाद की परिभाषा कर सकते हैं। जिस साधन की प्रयुक्त मात्रा में परिवर्तन किया जाता है, उसे हम परिवर्ती साधन कहते हैं। शेष सभी स्थिर साधन कहे जाते हैं

तालिका 11.1 में एक काल्पनिक उद्योग में उत्पादन दिखाया जा रहा है। यहाँ यंत्र-संयत्रादि तो स्थिर रहते हैं, पर श्रमिकों की संख्या में एक-एक वृद्धि की जा रही है :

तालिका 11.1 में एक फैक्टरी में उत्पादन

परिवर्ती साधन श्रम की इकाइयाँ	कुल उत्पाद	सीमांत उत्पाद
0	0	0
1	10	10
2	18	8
3	24	6
4	28	4
5	30	2

11.3.1 सीमांत भौतिक उत्पादन (Marginal Physical Product : MPP)

तालिका 11.1 के तीसरे कालम पर ध्यान दें : पहले श्रमिक के कार्य के फलस्वरूप 10 इकाइयों का उत्पादन होता है। दूसरा श्रमिक के आने से उत्पादन में 8 इकाइयाँ और जुड़ जाती हैं। यह क्रम इसी तरह चलता रहता है। अंततः पाँचवें श्रमिक के आगमन से तो केवल 2 इकाई अतिरिक्त उत्पादन ही संभव होता है। यहाँ हमने उत्पादन को भौतिक इकाइयों में ही दर्शाया है। इसी कारण हम तीसरे कालम में दर्ज उत्पादन को श्रम का सीमांत भौतिक उत्पाद (MPP) भी कहते हैं।

11.3.2 सीमांत उत्पादन का मूल्य (Value of Marginal Product : VMP)

श्रम का भौतिक सीमांत उत्पाद बाज़ार में प्रचलित कीमत पर बेचा जा सकता है। इस प्रकार प्राप्त हुए मूल्य को ही सीमांत उत्पाद का मूल्य अथवा सीमांत मूल्य उत्पादन (VMP) का नाम दिया जाता है। यह इस प्रकार ज्ञात होता है:

$$VMP = MPP \times \text{Price (वस्तु की)}$$

11.3.3 सीमांत आगम उत्पाद (Marginal Revenue Product : MRP)

कई बार फर्म की रुचि यह जानने में नहीं होती कि अतिरिक्त श्रमिक के कारण उत्पादन कितनी इकाई बढ़ा है अथवा अतिरिक्त उत्पादन कितने रुपयों में बिका। फर्म तो अपनी कुल आगम पर प्रभाव जानने की इच्छुक होती है। इस प्रकार हम सीमांत आगम उत्पाद की अवधारणा तक पहुँचते हैं। इसे एक अतिरिक्त श्रमिक को काम पर लगाने से कुल आगम में आए परिवर्तन द्वारा व्यक्त किया जाता है। अतः

सीमांत आगम उत्पाद = सीमांत आगम × सीमांत भौतिक उत्पाद

अथवा $MRP = MR \times MPP$

इसे परिवर्ती साधन के प्रयोग में परिवर्तन के कारण कुल आगम की परिवर्तन दर भी कहा जा सकता है:

$$MRP = \frac{\text{कुल आगम में परिवर्तन}}{\text{परिवर्ती साधन प्रयोग में परिवर्तन}}$$

वस्तु बाज़ार में पूर्ण प्रतियोगिता होने पर तो फर्म बाज़ार कीमत पर चाहे जितना उत्पादन बेच सकती है। इसकी माँग-वक्र क्षैतिज (horizontal) रहती है। इसी कारण औसत आगम, और उसके कारण सीमांत आगम स्थिर एवं कीमत के समान रहते हैं। यही हमें तालिका 11.1 का परिवर्तन पर तालिका 11.2 की रचना करने में सहायक बनता है। वस्तु की कीमत के विषय में जानकारी से हम कुल आगम (TR) सीमांत उत्पाद मूल्य (VMP), तथा सीमांत आगम उत्पाद (MRP) का आकलन कर सकते हैं।

तालिका 11.2

परिवर्ती साधन : श्रम की इकाइयाँ	कुल उत्पादन	सीमांत उत्पाद	वस्तु की कीमत	TR	VMP	VMP
0	0	0	20	0	0	0
1	10	10	20	200	200	200
2	18	8	20	360	160	160
3	24	6	20	480	120	120
4	28	4	20	560	80	80
5	30	2	20	600	40	40

नोट : ध्यान दें कि VMP = MRP (स्तंभ 6 तथा 7 की तुलना करें)। यह वस्तुतः हमारी पूर्ण प्रतियोगिता की पूर्वधारणा के कारण है। हम भाग 11.10 में इस विषय में और चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न 1

1) प्रत्येक निम्न अवधारणा की 50-60 शब्दों में व्याख्या करें :

क) सीमांत भौतिक उत्पाद

.....

.....

.....

.....

.....

ख) सीमांत उत्पाद का मूल्य

.....

.....

.....

.....

.....

ग) सीमांत आगम उत्पादन

.....

.....

.....

.....

.....

2) एक फर्म में पाँच श्रमिक कार्य करते हैं और यह फर्म प्रतिदिन 10 कुर्सियाँ उत्पादित कर उन्हें 50 रुपये प्रति इकाई के दामों बाज़ार में बेच रही है। एक और श्रमिक को काम पर लगाकर फर्म प्रतिदिन 12 कुर्सियाँ बना सकती है, किन्तु उन्हें केवल 45 रुपये प्रति इकाई बेचा जा सकता है। इस जानकारी के आधार पर बताएँ :

क) श्रम की MPP क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ख) श्रम की VMP क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ग) श्रम की MRP क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

11.4 उत्पादन साधन की माँग

फर्म बाज़ार में बेचने योग्य वस्तुओं के उत्पादन के लिए ही साधनों की माँग करती हैं। अतः हम कह सकते हैं कि उस फर्म की किसी भी उत्पादन साधन की माँग इस बात पर निर्भर होगी कि उस साधन द्वारा उत्पादित वस्तुओं की माँग की (बाज़ार में) कैसी स्थिति है। जब फर्म श्रम की इकाइयों की सेवाएँ प्राप्त करती है तो उसकी नज़र निरंतर इस बात पर रहती है कि उसकी अपनी कुल आगम एवं कुल लागत पर क्या प्रभाव पड़ता है। हमारी तालिका 11.2 में दिखाई गई काल्पनिक फर्म की बात ही लें। मान लो कि यह फर्म प्रत्येक कारीगर को 40 रुपये दिहाड़ी देती है। अतः पहले कारीगर के आने पर फर्म की लागत 40 रुपये बढ़ जाती है। इसके आगमन से उत्पादन में दस इकाइयों की वृद्धि होती है तथा फर्म इस सारे उत्पादन को 200 रुपये में बेच देती है। यहाँ फर्म की कुल आगम में 200 रुपये की वृद्धि हुई है पर लाइन में केवल 40 रुपये की है। यह तो बहुत ही उत्साहवर्धक स्थिति है। फर्म एक और कारीगर को रख लेती है। अब MPP = 8 है। इसका भी बाज़ार मूल्य 160 रुपये बनता है। आगम 360 रुपये हो जाती है– पर लागत में केवल 40 रुपये ही और जुड़ते हैं। दूसरा कारीगर फर्म के लिए 160 – 40 = 120 रुपये अधिकतम का सृजन करता है। फर्म इसी प्रकार अन्य कारीगरों को काम पर रखने का निर्णय करती रहती है। पाँचवाँ कारीगर भी फर्म की लागत को 40 रुपये ही बढ़ाता है पर उसकी MPP = 2 है। अतः फर्म की कुल आगम में भी 40 रुपये की ही वृद्धि होती है अब फर्म को आगे विस्तार करना उपयुक्त नहीं लगता। यहाँ तो लागत का परिवर्तन आगम के परिवर्तन के समान हो गया है। यहीं पर फर्म का संतुलन होता है। यही नहीं, यदि दर 40 रुपये से अधिक होती तो फर्म पाँचवें कारीगर को भी काम नहीं देती।

हम फर्म की VMP = MRP वक्र को चित्र 11.1 द्वारा दिखाई गई आकृति के समान बना सकते हैं।

चित्र 11.1

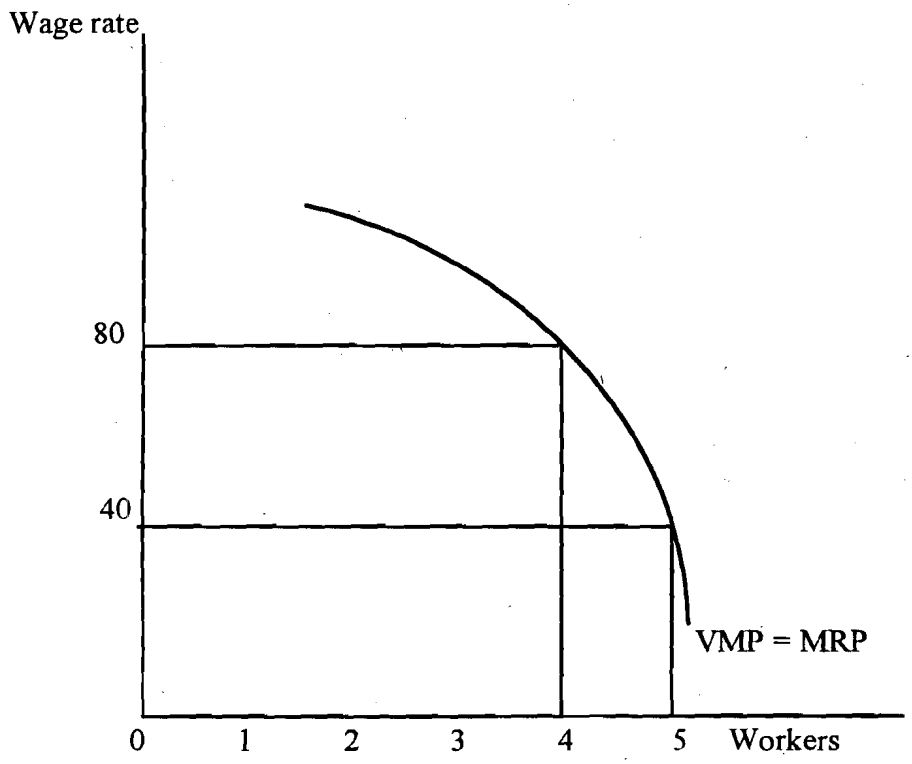

चित्र 11.1 में फर्म की VMP = MRP वक्र दिखाई गई है। यह वक्र एक उच्च स्तर से प्रारंभ हो शुरू में धीरे-धीरे, पर बाद में बड़ी तेज़ी से नीचे गिरने लगती है।

यदि मज़दूरी दर 40 रुपये हो तो फर्म 5 कारीगरों को काम पर रखती है, किन्तु मज़दूरी दुगुनी हो जाने पर यह केवल 4 ही कारीगरों को काम देना ठीक समझेगी। ध्यान दें कि मज़दूरी दुगुनी होने पर श्रम के प्रयोग में कमी तो आती है पर वह प्रयोग आधार नहीं रह जाता।

चालीस रुपये की मज़दूरी पर फर्म 5 लोगों को काम देती है पर अस्सी रुपये की दर से तो वह केवल 4 कारीगरों को ही रख पाती है। इसका कारण यही हैं कि अब पाँचवाँ कारीगर फर्म की लागत तो 80 रुपये बढ़ा देगा पर उसकी आगम में केवल 40 रुपये की वृद्धि हो पाएगी। उस श्रमिक की MPP = 2 तथा बीस रुपये प्राप्ति इकाई पर ये दो इकाइयाँ केवल 40 रुपयों में ही बिक पाएगी। फर्म इस प्रकार होने वाली 40 रुपये की हानि सहन नहीं करती।

MRP वक्र के माध्यम से हम उत्पादक के व्यवहार की एक और विलक्षणता को भी समझ सकते हैं। इस वक्र के नीचे आयताकार क्षेत्रफल फर्म की कुल श्रम लागत दिखाता है जबकि वक्र के अधीनस्थ समग्र क्षेत्रफल उसके समग्र आगत का परिचालक है। अतः वक्र एवं आयत के बीच का त्रिभुजाकार क्षेत्रफल उत्पादक का आधिक्य कहा जा सकता है। अब उसके अधिकतम लाभ कमाने को हम एक नई व्याख्या प्रदान कर सकते हैं– उत्पादक अपना उपर्युक्त विधि से परिभाषित आधिक्य अधिकतम करने का प्रयास करता है। हम कह सकते हैं कि साधन कीमतों का समावेश कर MRP वक्र द्वारा हम यह जान सकते हैं कि फर्म उस संसाधन की अधिकतम कितनी इकाइयों की सेवाएँ प्राप्त करनी चाहेगी। इस प्रकार से किसी भी साधन की MRP वक्र फर्म की उस साधन के लिए माँग-वक्र बन जाती है।

सामान्यतः फर्म उस बिन्दु तक साधन की इकाइयों का प्रयोग करती रहेगी जहाँ तक कि उसकी MRP बाज़ार में साधन कीमत के समान नहीं हो जाती। हमारे उदाहरण में जब तक MRP बाज़ार मज़दूरी दर (40 रुपये) से अधिक रहती है फर्म और श्रमिकों को काम देती रहती है। ऐसा प्रत्येक

कारीगर फर्म के आधिक्य में कुछ न कुछ योगदान ही देता है। किन्तु MRP = W (जहाँ वह 5 कारीगर रखती है से आगे छठे श्रमिक की MRP तो मज़दूरी दर से कम रह जाएगी। उसे काम पर रखने का अर्थ होगा पाँचवें कारीगर तक अर्जित आधिक्य में से भुगतान करना। फर्म का 6 श्रमिकों के साथ काम करने पर आधिक्य उस राशि से कम रह जाएगा जो वह केवल पाँच श्रमिकों से ही कमा रही थी। अतः मज़दूरी दर 40 रुपये होने पर तो फर्म केवल 5 श्रमिक रखकर ही अधिकतम आधिक्य कमा सकती है।

इस प्रकार हम जान गए कि MRP ही किसी साधन की माँग-वक्र होती है। अतः वे सभी कारक जिनका MRP पर प्रभाव पड़ता हो, साधन की माँग-वक्र को भी प्रभावित करेंगे। ये प्रभाव है :

i) **साधन की प्रतिस्थापनशीलता :** किसी साधन के बदले अन्य साधन प्रयोग में लाना जितना सहज होता है, उसकी माँग की लोच भी उतनी ही अधिक होती है।

ii) **वस्तु की माँग में परिवर्तन :** हम जानते है कि वस्तु की कीमत, और इस प्रकार उसकी सीमांत आगम, किसी साधन की MRP के स्तर को किस प्रकार निर्धारित करती है। अतः यदि किसी वस्तु की माँग में वृद्धि होती है, तो इसकी कीमत में भी वृद्धि होगी। उत्पाद माँग-वक्र के ऊपर की ओर खिसकने से सीमांत आगत-वक्र भी ऊपर उठा जाएगी। साधन की सीमांत भौतिक उत्पाद वक्र स्थिर रहने पर, अब तो उसकी सीमांत आगम उत्पाद वक्र ऊपर (या बाहर) की ओर खिसक जाएगी। यह साधन की माँग में वृद्धि का ही परिचायक है।

iii) फर्म की कुल उत्पादन लागत का कितना प्रतिशत अंश किसी साधन पर व्यय होता है। इस बात का भी उस साधन की माँग की लोचशीलता पर प्रभाव पड़ता है।

11.4.1 साधन की बाज़ार माँग

हम जानते ही हैं कि उत्पादन साधनों के अनेक वैकल्पिक प्रयोग हो सकते हैं। श्रम का सभी औद्योगिक गतिविधियों में प्रयोग होता है। तो फिर श्रम की बाज़ार माँग का स्वरूप क्या होगा?

हम बाज़ार माँग का निर्धारण दो चरणों में कर सकते हैं। पहले तो किसी वस्तु X का उत्पादन करने वाली सभी फर्मों द्वारा श्रम की माँग-वक्रें उनकी अपनी-अपनी MRP वक्रों द्वारा निर्धारित होती हैं। इन सभी MRP वक्रों का योग कर हम उद्योग X द्वारा श्रम की माँग ज्ञात कर सकते हैं। चित्र 11.2 में इसी X उद्योग व्यापि साधन माँग-वक्र का निर्धारण किया गया है। यह कार्य इन फर्मों की MRP का प्रत्येक मज़दूरी दर पर क्षैतिज योग द्वारा किया गया है। यह उद्योग MRP माँग-वक्र इसके घटकों की माँग-वक्रों की अपेक्षा बहुत धीमे-धीमे ही नीचे गिरती दिखाई देती है।

चित्र 11.2

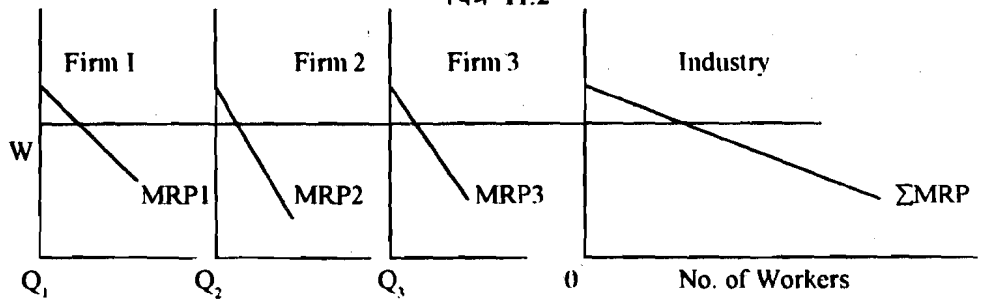

चित्र 11.2 के चार भाग हैं। पहले तीन भागों में उद्योग X के घटक फर्मों की MRP हैं। W_1 मज़दूरी दर पर ये घटक फर्में क्रमशः OA, OB तथा OC इकाई श्रम का प्रयोग करना चाहती हैं। इन इकाइयों का योग (OA + OB + OC) चौथे भाग में दिखाई गई उद्योग माँग OL_1 के समान ही है। इसी प्रकार हम प्रत्येक मज़दूरी दर पर सारे उद्योग श्रम की संकलित माँग-वक्र (=MRP) के सभी बिन्दु निर्धारित कर सकते हैं।

दूसरे चरण में हम विभिन्न उद्योगों, X_1, X_2 तथा X_3 आदि, के माँग-वक्रों को जोड़कर श्रम की समग्र माँग-वक्र बना सकते हैं। चित्र 11.3 में यही किया गया है। पहले तीन भाग X_1, X_2 और X_3 उद्योगों की श्रम की माँग दर्शा रहे हैं। चौथे भाग में उन माँगों का क्षैतिज योग कर अर्थव्यवस्था के श्रम माँग-वक्र का निर्धारण हुआ है।

चित्र 11.3

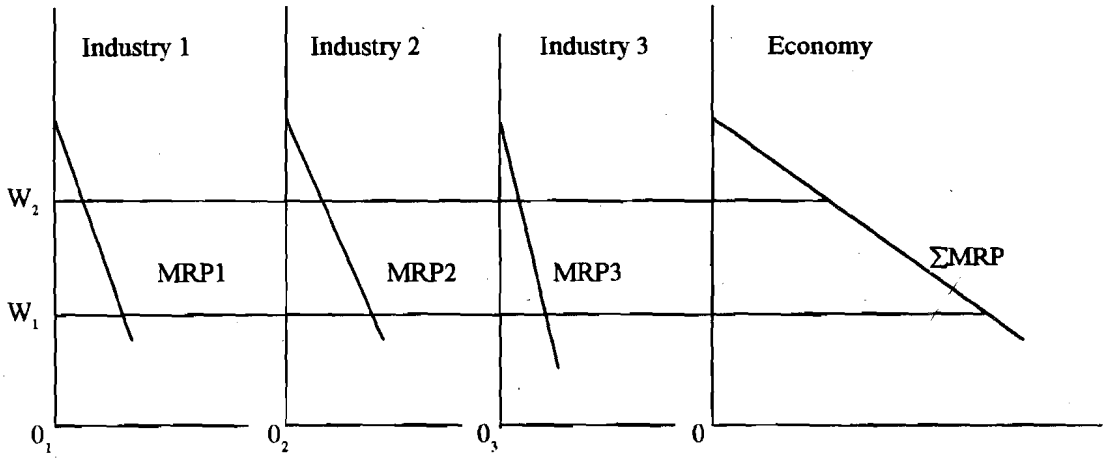

चित्र 11.3 में विभिन्न उद्योगों के मांगवक्र जोड़कर श्रम की समग्र मांग-वक्र देखाया गया है।

11.5 साधन आपूर्ति

बाज़ार में एक साधन की कीमत का निर्धारण माँग एवं आपूर्ति की शक्तियों से होता है। हमने भाग 11.1 से 11.4 तक एक साधन (श्रम) की माँग-वक्र का निरूपण किया हैं। आइए, अब उसकी आपूर्ति पर जुड़ी बातों पर भी चर्चा करें। जब हमारे पास माँग और आपूर्ति-वक्र होंगे तभी हम साधन के संतुलन स्तर पर कीमत, माँग व आपूर्ति ज्ञात कर पाएँगे। माँग-वक्रों की कुछ विशेषताओं का पहले ही स्पष्टीकरण कर देना अच्छा रहेगा। हम साधनों को चार वर्गों में बाँटते हैं। ये हैं : श्रम, भूमि, पूँजी और उद्यम। उनकी अपनी-अपनी अंतर्भूत विशेषताएँ हैं। यह कहना तो ठीक नहीं होगा कि श्रम की और भूमि की आपूर्तियाँ चीनी और गेहूँ की आपूर्तियों जैसी ही होगी। किसी वस्तु का क्रेता उस वस्तु को खरीदकर अपने साथ ले जाता है। किन्तु भूमि का उर्वरा शक्ति के खरीदार को भूमि पर आकर मेहनत करनी पड़ेगी। इसी तरह भ्रम के खरीददार श्रमिक द्वारा किए गए काम की ही कीमत चुकाते हैं। यहाँ श्रमिक रोज़गारदाता द्वारा इंगित स्थान पर आकर काम पूरा कर वापस चला जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि वस्तुओं की खरीदारी में तो खरीदार उनका मालिक बन जाता है, किन्तु साधन सेवाओं के मामले में ऐसा नहीं होता। फसल की कटाई के बाद भूमि पुनः अपने मालिक के अधिकार में चली जाती हैं। श्रम का स्वामी स्वयं प्रयास करके ही श्रम की आपूर्ति को प्रभावी बना जाता है। फिर भी हम एक उत्पादन साधन के आपूर्ति-वक्र की परिभाषा दे सकते हैं। यदि समाज में कोई उत्पादन साधन उपलब्ध है तो उस साधन की आपूर्ति इस बात पर निर्भर करेगी कि बदले में उन्हें क्या आय मिलती है।

11.5.1 साधन का प्रतिफल एवं उसकी आपूर्ति

किसी साधन को जितना अधिक प्रतिफल प्राप्त होता है, उसकी आपूर्ति भी उतनी ही अधिक होती है। चित्र 11.4 ऐसी ही एक साधन आपूर्ति-वक्र दिखा रहा है। प्रतिफल तो साधन के स्वामी को किसी अन्य व्यक्ति को उस साधन का प्रयोग करने की अनुमति देने के लिए प्रोत्साहित करता है। अतः जितना अधिक प्रतिफल दिया जाएगा, साधन स्वामी उस साधन का उतना अधिक प्रयोग करने की अनुमति देने को तैयार हो पाएगा।

चित्र 11.4

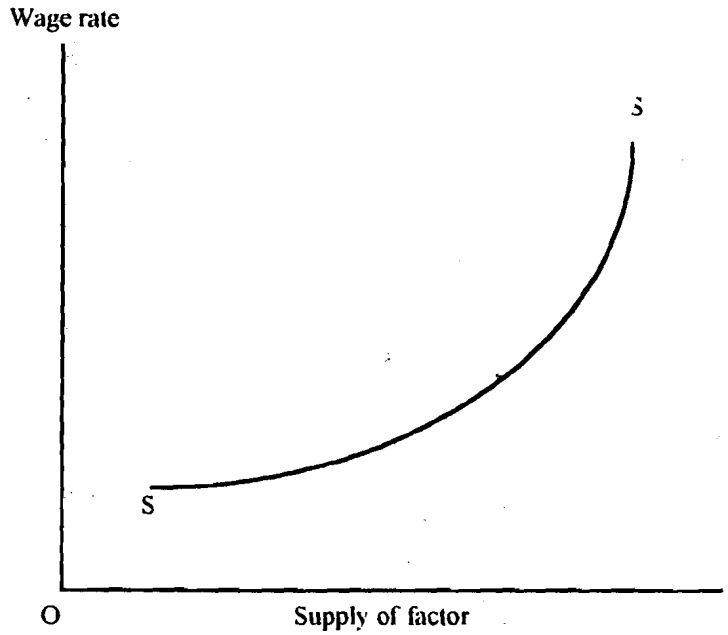

चित्र 11.4 एक साधन आपूर्ति वक्र दिखा रहा है।

अलग-अलग साधनों के प्रतिफलों को हम पृथक-पृथक नाम देते हैं। श्रम का प्रतिफल मज़दूरी, भूमि का लगान, पूँजी का ब्याज तो उद्यम का प्रतिफल लाभ कहा जाता है

11.5.2 पूर्ण उत्पाद वितरण प्रमेय (Product Exhaustion Theorem)

वितरण के सीमांत उत्पादिता सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक साधन इकाई को उस साधन की सीमांत उत्पादिता के समान प्रतिफल मिलता है। इसका निहित अर्थ यह भी रहता है कि किसी भी साधन की सभी इकाइयों को मिलने वाले प्रतिफल एक समान रहता है। हमारे चित्र 11.1 में दिखाए गए उद्धरण को एक बार याद कीजिए। बाज़ार में मज़दूरी की दर 40 रुपये बताई गई थी। यह प्रतिफल अन्तिम श्रमिक की MRP के समान था। हम जानते हैं कि प्रथम श्रमिक की उत्पादन का मूल्य तो 200 रुपये था, दूसरे के उत्पादन का मूल्य 160 रुपये था, आदि। सीमांत आगम उत्पाद के समान प्रतिफल का अर्थ यह कदापि नहीं होगा कि प्रत्येक इकाई को उसकी अपनी MRP के समान प्रतिफल मिलता है। प्रत्येक इकाई को अपनी ही तरह की अन्तिम इकाई के सीमांत आगम उत्पाद के समान प्रतिफल मिलता है। हमने कुल आगम एवं श्रम भुगतान के बीच के अंतर को उत्पादक का आधिक्य (producer's surplus) बताया था। यह सारा आधिक्य अकेले उत्पादक को नहीं मिलता। इसी में से उसे अन्य तीन साधनों को प्रतिफल देना पड़ता है।

आइए इसी भाग में हम वितरण के सीमांत उत्पादिता सिद्धांत के एक अत्यंत साफ-सुथरे परिणाम पर विचार करें। यह परिणाम पैमाने के स्थिर प्रतिफलों की मान्यता पर आधारित है। आप पहले की कॉब डगलस (Cobb-Douglas) उत्पादन फलन (production function) से परिचित हैं। अर्थात् $Q = AL^{\alpha} K^{\beta}$ जहाँ कि $\alpha + \beta = 1$

यहाँ K = पूँजी

L = श्रम

Q = उत्पादन

A = तकनीकी (Constant)

ऐसे फलन में श्रम एवं पूँजी की सीमांत उत्पादिता क्रमशः MP_1 तथा MP_K होगी। इनके मान ज्ञात करने के उद्देश्य से हम उत्पादन फलन का क्रमशः श्रम एवं पूँजी से अवकलन (differentiate) करते हैं। अतः

$MP_L = \delta Q / \delta L = \alpha AL^{\alpha-1} \beta K^{\beta}$; तथा

$MP_K = \delta Q / \delta K = \alpha AL^{\alpha} \beta K^{\beta-1}$

मज़दूरी की दर (=W) श्रम की सीमांत उत्पादिता MP_L तथा पूँजी का प्रतिफल दर (= r) पूँजी की सीमांत उत्पादिता MP_K के समान होगी। अतः समग्र मज़दूरी राशि $MP_L \times L$ और समग्र पूँजी प्रतिफल $MP_K \times K$ के समान होगी।

अतः हम कह सकते हैं :

श्रम का कुल उत्पादन का अंश $= L \times \alpha AL^{\alpha-1}K^{\beta} = \alpha AL^{\alpha}K^{\beta}$

पूँजी का कुल उत्पादन का अंश $= K \times \beta AL^{\alpha}K^{\beta} = \beta AL^{\alpha}K^{\beta}$;

यहाँ केवल श्रम एवं पूँजी का प्रयोग हुआ है। आइए अब इन दोनों संसाधनों के उत्पादन अंशों का योग करें:

श्रम का अंश + पूँजी का अंश $= \alpha AL^{\alpha}K^{\beta} + \beta AL^{\alpha}K^{\beta}$

$= AL^{\alpha}K^{\beta} + (\alpha + \beta)$

$= AL^{\alpha}K^{\beta} = Q$

हम देखते हैं इन दोनों साधनों के अंशों का कुल योग कुल उत्पादन के समान ही है। इसी कारण इस विचार को पूर्ण उत्पाद वितरण प्रमेय का नाम दिया जाता है, अर्थात् यदि प्रत्येक साधन की प्रत्येक इकाई को उस साधन की सीमांत उत्पादिता के समान प्रतिफल दिया जाए तो सारा उत्पादन पूरी तरह बँट जाता है, कुछ भी बचा नहीं रहता।

11.5.3 अपूर्ण वस्तु बाज़ार में साधन प्रतिफल एवं रोज़गार

अभी तक हम वस्तु एवं साधन बाज़ारों में पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता के आधार पर ही विचार कर रहे थे, पर, आइए अब वस्तु बाज़ार की पूर्ण प्रतियोगिता की मान्यता में ढील देकर उसके परिणामों को समझने का प्रयास करें। हम जानते हैं कि पूर्ण प्रतियोगिता में वस्तु का प्रत्येक उत्पादक बाज़ार कीमत को अपनाता है इससे उसका माँग-वक्र X-अक्ष के समांतर रहता है और वही वक्र कीमत, औसत आगम और सीमांत आगम-वक्र भी है। परिणामस्वरूप VMP एवं MRP वक्र भी एक-दूसरे के समान रहती हैं। हमने यही बात चित्र 11.1 में दर्शाई थी। किन्तु, यदि वस्तु बाज़ार में किसी प्रकार की अपूर्णता आ जाए तो फिर माँग-वक्र X-अक्ष के समांतर न होकर वह दाहिनी ओर ढलवा हो जाती है। फिर तो उससे जुड़ी सीमांत आगम-वक्र भी पूरी तरह उसके नीचे ही रहेगी। यह Y-अक्ष एवं औसत आगम-वक्र के मध्य में स्थित होगी। अब सीमांत आगम उत्पाद की क्या स्थिति होगी? एक अतिरिक्त मज़दूर रखने से उत्पादन में वृद्धि होगी। उत्पादन बढ़ने पर तो सारा उत्पादन ही पहले की अपेक्षा कम कीमत पर बेचना पड़ेगा। अब कुल आगम की वृद्धि की दर पहले की अपेक्षा कम रह जाएगी। अतः अब तो VMP के स्थान पर MRP ही इस बात का निर्णय करेगी कि उस साधन का प्रयोग कहाँ तक लिया जाए। हमारा चित्र 11.5 इसी अवस्था को दर्शा रहा है।

चित्र 11.5

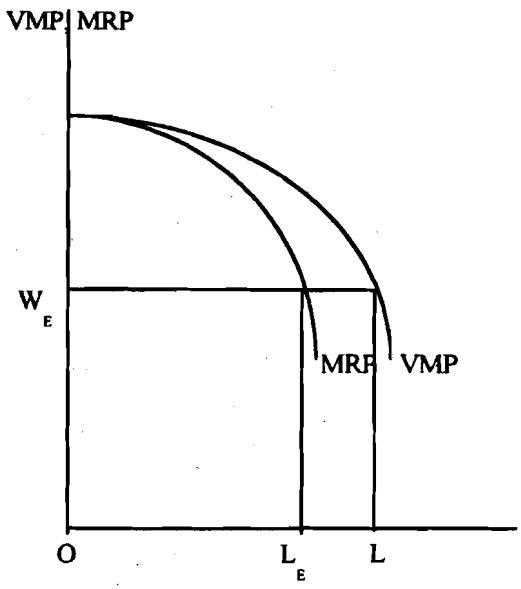

चित्र 11.5 यह दर्शाता है कि वस्तु बाज़ार की अपूर्णता के परिणामस्वरूप MRP की पूरी तरह VMP से नीचे ही रह जाती है। इसी कारण जहाँ प्रतियोगी वस्तु बाज़ार में हमारा उत्पादक OL_C मात्रा में श्रम इकाइयों का प्रयोग कर रहा था वहीं वस्तु बाज़ार की अपूर्णता के कारण अब MRP के आधार पर यह निर्णय होगा कि श्रम की कितनी इकाइयों का प्रयोग की जाएँ। इब केवल OL_N श्रम का प्रयोग होगा।

स्पष्ट है कि वस्तु बाज़ार में अपूर्णता के कारण श्रम का रोज़गार कम हो जाता है। पर, इस अपूर्णता का मज़दूरी की दर पर क्या प्रभाव होगा? एक बार फिर इसी चित्र पर ध्यान दें। यदि वस्तु बाज़ार प्रतियोगी होता तो OL_N श्रमिकों को OW_1 दर से मज़दूरी मिलती, किन्तु अपूर्णता के कारण उन्हें OW से ही संतोष करना पड़ता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि वस्तु बाज़ार की अपूर्णता, जिसके पीछे श्रमिकों का कोई हाथ नहीं होता, के कारण श्रम पर दौहरी मार पड़ती है। श्रमिकों को न केवल रोज़गार की तंगी अनुभव होती है बल्कि उन्हें कम मज़दूरी पर भी कार्य करने को बाध्य होना पड़ता है। यह घटनाक्रम श्रम के शोषण का अभ्यास करता है यह तर्क सभी साधनों के प्रयोग एवं प्रतिफलों पर शासन रूप से लागू होता है।

नोट : साधन बाज़ार की अपूर्णताओं के प्रभावों का विश्लेषण हम अलग-अलग साधनों की कीमत निर्धारण के संदर्भ में करेंगे। श्रम के विषय में इन मुद्दों पर भाग 11.10 में विचार किया

11.6 वितरण के सीमांत उत्पादिता सिद्धांत की सीमाएँ

कई बार पूर्ण उत्पादन प्रमेय के आधार पर यह दावा किया जाता है कि सीमांत उत्पादिता सिद्धांत के अनुसार सारा उत्पादन पूरी तरह बाँट दिया जाता है–कुछ भी शेष नहीं बचता। अतः वितरण की यह विधि से न्यायपूर्ण भी मानी जानी चाहिए, क्योंकि कुछ शेष नहीं बचने का अर्थ होगा कि किसी का शोषण भी नहीं हुआ। पर इस प्रकार के लेखांकन को सिद्धांत की न्यायपूर्णता का आधार नहीं बनाया जा सकता। ये प्रतिफल साधनों को नहीं उनके स्वामियों का ही प्राप्त होते हैं।

यह सिद्धांत हमें किसी भी प्रकार नहीं बता पाता कि MRP के आधार पर प्रतिफल पाने वाला व्यक्ति क्या सचमुच में उस प्रतिफल को पाने का अधिकारी भी है अथवा नहीं। उदाहरणतः, मान लो कि एक एकड़ भूमि का लगान 2000 रुपये है। जिस भी किसी का उस एक एकड़ भू-खंड पर नियंत्रण

होगा, उसे 2000 रुपये प्रतिफल मिल जाएगा। पर क्या वह व्यक्ति वास्तव में इस रकम को पाने का अधिकारी है? हो सकता है, उस भू-स्वामी ने धोखाधड़ी करके उस जमीन पर कब्ज़ा किया हो, या भाड़े के गुंडों द्वारा किसी से वह भू-खंड हथियाया हो, या फिर नदी के पार की सरकारी ज़मीन पर नाजायज़ कब्ज़ा किया हुआ हो।

एक अन्य बात, MRP हमें यह नहीं बताती कि भूमि पर कोई व्यक्ति कितनी मेहनत कर रहा है। यहाँ तो बस MRP = MPP × MR होता है, पर MPP इस बात पर भी निर्भर है कि कितने श्रमिक काम कर रहे हैं– जितने अधिक श्रमिक, MPP उतनी ही कम। अतः MRP भी कम रह जाएगी। इस प्रकार MRP उन श्रमिकों के प्रयास या मेहनत को भली प्रकार नहीं दिखा पाती जिन्हें इसके आधार पर मेहनताना या प्रतिफल दिया जाता है।

यही नहीं, जैसे हमने भाग 11.5 में दिखाया था, रोज़गार एवं प्रतिफल, दोनों ही वस्तु बाज़ार के घटनाक्रम से भी प्रभावित होते हैं। मान लो कि किसी फर्म के कर्मी बहुत मेहनत करते हैं। फर्म का व्यवसाय बहुत फलता-फूलता है और वह अपने उद्योग में कुछ शक्तिशाली बन जाती है। फिर तो इसकी औसत एवं सीमांत आगत-वक्र दाहिनी ओर ढलवा हो जाएँगे। परिणामस्वरूप, MRP अब VMP से नीचे रह जाएगी। फर्म अपेक्षाकृत कम श्रमिकों को पूर्ण प्रतियोगिता की तुलना में, कम मज़दूरी पर काम देना ही लाभप्रद मानेगी। क्या श्रमिकों के पूर्ण मनोयोग से किए गए प्रयासों का यही पुरस्कार होगा? किसी भी अन्य सिद्धांत की मुख्य मान्यताएँ हैं पैमाने के स्थिर प्रतिफल, सभी बाज़ारों में पूर्ण प्रतियोगिता और अर्थव्यवस्था में बाह्यताओं की अनुपस्थिति। किन्तु क्या आज के विश्व में ये तीनों मान्यताएँ एक साथ कहीं पूरी हो जाती हैं?

वैसे भी यह विचार प्रतिफल पाने वाले व्यक्तियों को उत्पादन में एक आगत (Input) मात्र मान लेता है। फिर बड़े बूढ़ों एवं कमज़ोर व लाचार व्यक्तियों का क्या होगा? उनकी सीमांत उत्पादिता शून्य प्रायः रह जाएगी– फिर तो उनकी आय भी शून्य हो जाएगी। सामाजिक उत्पादन को समाज के घटकों के बीच बाँटने की इस प्रकार की हिसाब-किताब पर आश्रित विधि को न्यायपूर्ण मानना और सामाजिक आधार पर उचित ठहरा पाना संभव नहीं है।

अतः हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि सीमांत उत्पादिता सिद्धांत हमें व्यवस्था की कार्यपद्धति एवं नीति निर्धारण प्रक्रिया के विषय में कुछ जानकारी अवश्य प्रदान करती है। यद्यपि इसमें कई त्रुटियाँ हैं, फिर भी जब तक वितरण का कोई अन्य बेहतर प्रतिमान विकसित नहीं हो जाता, इसका प्रयोग करते रहना ही हितकर रहेगा।

बोध प्रश्न 2

1) किसी साधन को काम पर रखते हुए फर्म सीमांत उत्पाद की किस अवधारणा को ध्यान में रखती है? (एक वाक्य में बताइए)

.....

.....

2) क) यदि MRP>W तो फर्म के विस्तार से लाभ में वृद्धि/कमी आएगी।

.....

ख) यदि MRP<W तो रोज़गार में संकुचन से फर्म की हानि में कमी/वृद्धि होगी।

.....

3) बताइए कि ये कथन सत्य (T) है अथवा असत्य (F) :

क) पूर्ण उत्पादन वितरण प्रमेय (Product Exhaustion Theorem) पैमाने के बढ़ते प्रतिफलों की दशा में भी मान्य होती है ।

ख) बाह्यताओं की उपस्थिति में भी पूर्ण उत्पादन वितरण प्रमेय वैध रहता है ।

4) फर्म की VMP इसकी श्रम के लिए माँग/आपूर्ति-वक्र बन सकती है तथा यह श्रम के सीमांत/औसत उत्पाद एवं फर्म द्वारा उत्पादित वस्तु की कीमत/लागत पर निर्भर होती है । (इस वाक्य में अनुपयुक्त शब्दों को काटकर इसका तर्क संगत स्वरूप लिखें)

.....

.....

11.7 मज़दूरी निर्धारण

इस भाग में हम मज़दूरी की दर के निर्धारण पर चर्चा कर रहे हैं । इससे पहले कि हम उस संदर्भ में श्रम की माँग एवं आपूर्ति के बारे में बात करें, कुछ अवधारणाओं की परिभाषा जानना आवश्यक है:

i) **मज़दूरी** : यह श्रम के मेहनताने का सामान्य नाम है ।

ii) **वेतन** : दफ्तरों में कार्य करने वालों की मज़दूरी को वेतन कहा जाता है । सामान्यतः मासिक वेतन की चर्चा होती हैं, कहीं-कहीं वार्षिक वेतन की बात भी की जा सकती है ।

iv) **नकद एवं वस्तु रूप** : सामान्यतः मज़दूरी का भुगतान नकद होता है । किन्हीं परिस्थितियों में कुछ विशेष वर्ग के श्रमिकों को खाद्यान्न आदि के रूप में भी काम का मेहनताना दिया जा सकता है । जैसे, अकाल सहायता कार्यों में लगे श्रमिक । इसी प्रकार घरेलू नौकरों के वेतन में रोटी, कपड़ा एवं रहने की जगह भी शामिल रहती हैं ।

v) **कार्यानुसार मज़दूरी** : मज़दूरों को उनके काम के हिसाब से मज़दूरी दी जा सकती है । यहाँ प्रत्येक मज़दूर द्वारा किए गए कार्य का पृथक मापन संभव रहता है । पर सामान्यतः कार्य की गुणवत्ता का आकलन की आवश्यकता नहीं रहती । मज़दूरों पर निगरानी रखने की आवश्यकता नहीं रहती ।

vi) **समयानुसार मज़दूरी** : यहाँ मज़दूर द्वारा कार्य पर लगाए समय के अनुसार भुगतान होता है कार्य की गुणवत्ता महत्त्वपूर्ण होती है, किन्तु प्रत्येक कारीगर द्वारा किए गए कार्य का आकलन संभव नहीं होता । इसीलिए उन पर निगाह जरूरी हो जाता है ।

vii) **मौद्रिक मज़दूरी** : मज़दूरी के रूप में प्राप्त नकद राशि ।

viii) **वास्तविक मज़दूरी** : मज़दूरी की क्रय शक्ति - अन्ततः किसी व्यक्ति आमदनी की कसौटी उस राशि द्वारा प्राप्य वस्तुओं - सेवाओं की मात्रा ही होती है । किन्तु वास्तविक मज़दूरी में रोज़गार से संबंधित कुछ अन्य सुविधाएँ (जैसे चिकित्सा, आवास, बच्चों की शिक्षा आदि) भी शामिल की जाती है ।

11.7.1 श्रम एवं श्रम की आपूर्ति

श्रम पदार्थों को वस्तुओं में परिवर्तित करने के निमित्त हुआ मानवीय प्रयास ही है । यह परिवर्तन *भौतिक* हो सकता है - जैसे कपास से कपड़े का निर्माण । परिवर्तन का स्वरूप *स्थानांतरण* भी हो

सकता है जैसे कश्मीर में पैदा हुए सेब केरल के उपभोक्ताओं को सुलभ कराना। *समयांतरण* भी इसी परिवर्तन का तीसरा स्वरूप है– गर्मी में काटी गई फसलों के अनाज को महीनों बाद सर्दियों में भी उपभोग के लिए सुलभ रखना इसी का उदाहरण होगा। इन तीनों प्रकार के परिवर्तनों से उपयोगिता की वृद्धि होती है। इसी से इन्हें उत्पादन की क्रियाएँ कहा जाता है– इनमें बनाना, निर्माण करना, भण्डारण और परिवहन सभी कार्य सम्मिलित रहते हैं। इन कार्यों में हुए मानवीय प्रयास को ही श्रम कहा जाता है। कुछ प्रकार के श्रम के लिए भुगतान होता है पर किन्हीं श्रमों का कोई भुगतान या पारिश्रमिक नहीं चुकाया जाता– परिवार के सदस्यों द्वारा पारिवारिक व्यवसाय में हाथ बँटाने पर तो कदाचित् मज़दूरी का आकलन भी नहीं होता।

समाज में श्रम की कुल आपूर्ति निम्न तत्त्वों पर निर्भर है :

i) जनसंख्या के आकार एवं आयु अनुसार विभाजन पर, और

ii) श्रमशक्ति के मापदण्ड और उसमें भागीदारी।

इस प्रकार श्रम की आपूर्ति का निर्धारण जटिल सामाजिक, आर्थिक, जैवशास्त्रीय, यहाँ तक की कानूनी शक्तियाँ मिलजुल कर करती है।

11.7.2 एक व्यक्ति द्वारा श्रम की आपूर्ति

सामान्यतः आशा रहती है कि अधिक मज़दूरी के लालच में कोई भी व्यक्ति ज़्यादा (घंटों तक) काम करने को तैयार हो जाएगा। किन्तु यह मत कई बार इस बात को अनदेखी कर देता है कि श्रमिक को श्रम की आपूर्ति करते समय स्वयं वहाँ उपस्थित रहना पड़ता है। अपनी कार्य क्षमता को पुनः तरोताज़ा करने के लिए उसे कुछ देर तक आराम की भी जरूरत होती है। अतः यह अपेक्षा करना अनुचित होगा कि कोई भी व्यक्ति दिनों-दिन चौबीसों घंटे काम करता रह सकता है।

चित्र 11.6

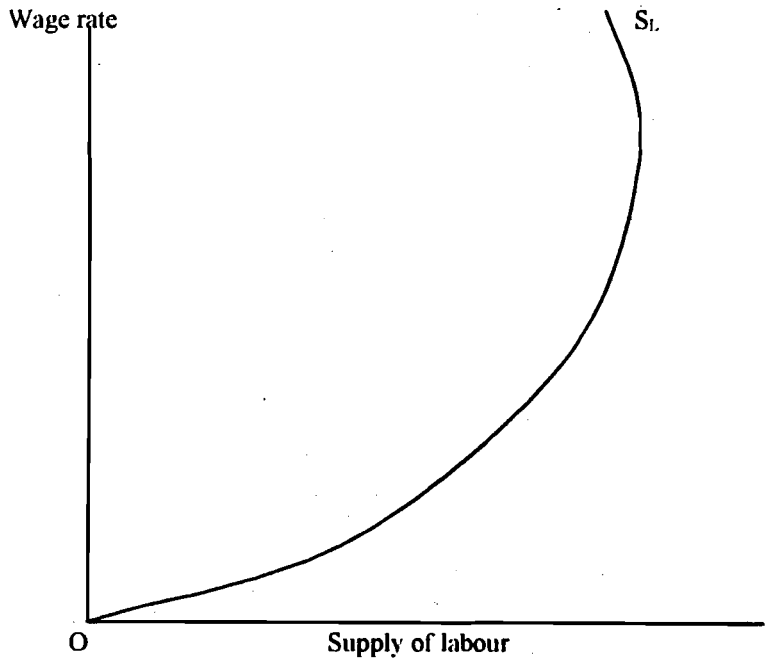

चित्र 11.6 दर्शाता है कि शुरू में कम मज़दूरी दर पर श्रमिक मज़दूरी में वृद्धि से उत्साहित होकर अधिक घंटों कार्य करता है। किन्तु एक अच्छी खासी मज़दूरी दर मिलने पर तो और वृद्धि होने पर वह पहले की अपेक्षा आराम को अधिक महत्त्व देने लगता है–आखिर आराम ही नहीं मिलेगा तो आदमी कमाता क्यों है? अतः वह कम काम करता है।

सामान्यतः व्यक्ति प्रतिदिन कुछ ही घंटे कार्य करता है। बाकी समय वह अपनी कार्य क्षमता को पुनः जाग्रत करने में लगाता है। अतः बहुत कम प्रति घंटा मज़दूरी की दर की तुलना में उच्च दर श्रमिक को अपेक्षाकृत अधिक समय तक कार्य करने को प्रोत्साहित करेगी। किन्तु यदि मज़दूरी दर पहले ही (पर्याप्त) ऊँची हो तो वही व्यक्ति मज़दूरी बढ़ने पर अधिक काम की अपेक्षा अधिक आराम को पसंद कर सकता है। आखिर इसी प्रकार तो वह अपनी मेहनत के फलों को भोग पाता है। इस कारण से व्यक्ति की श्रम आपूर्ति-वक्र किसी न किसी ऊँचे मज़दूरी स्तर पर पीछे की ओर मुड़ जाती हैं (चित्र 11.6)। जिस मज़दूरी दर पर यह पीछे की तरफ मुड़ता है, वह प्रत्येक मज़दूर की अपनी भौतिक एवं मानसिक दशा पर ही निर्भर करता है।

11.7.3 श्रम की बाज़ार आपूर्ति (Market Supply of Labour)

जिस प्रकार हम किसी वस्तु की बाज़ार में माँग या आपूर्ति का निर्धारण करते हैं उसी प्रकार विभिन्न व्यक्तियों की श्रम आपूर्ति-वक्र के क्षैतिज योग द्वारा बाज़ार श्रम आपूर्ति ज्ञात कर सकते हैं। चित्र 11.7 में 3 मज़दूरों की श्रम आपूर्ति-वक्रों को S_1, S_2 एवं S_3 द्वारा दिखाया गया है। इन्हीं का योगफल में बाज़ार श्रम आपूर्ति दिखा रहा है।

चित्र 11.7

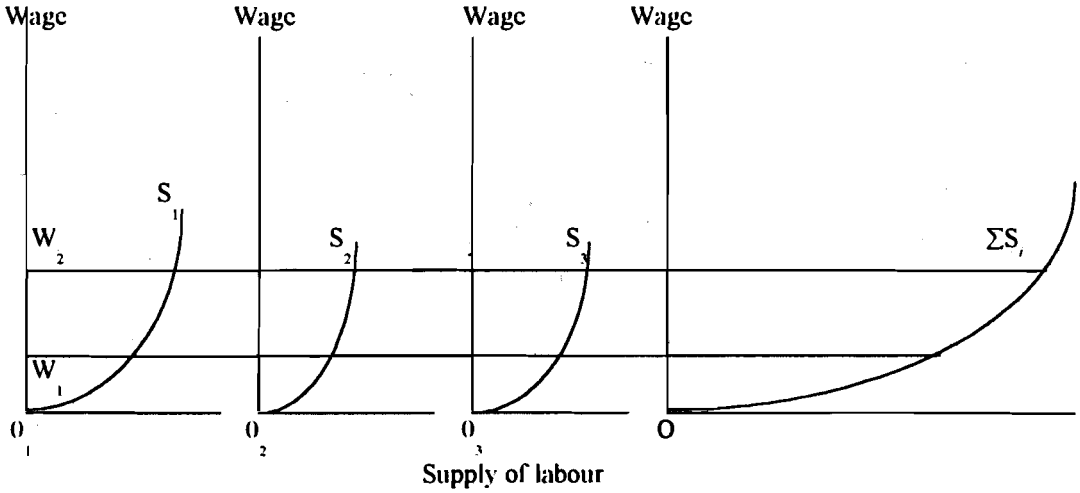

चित्र 11.7 मजदूरों की आपूर्ति वक्रों को दिखाता है।

11.8 श्रम की अल्पकालीन माँग

उत्पादकों को उपभोक्ताओं की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्पादन हेतु श्रम की सेवाओं की आवश्यकता होती है। यदि उपभोक्ता वस्तु X की अधिक मात्रा की माँग करते हैं तो इसके उत्पादकों को उत्पादन वृद्धि कर अधिक लाभ कमाने का अवसर दिखाई पड़ता है। वे तत्काल (अल्पकाल में) मज़दूरों से कुछ अधिक देर तक (overtime) काम करवाकर अतिरिक्त बाज़ार माँग को पूरा करने का प्रयास करेंगे। (यदि बाज़ार में वह माँग वृद्धि स्थायी स्वरूप धारण कर ले, तो वे अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ाने–नयी मशीनें आदि लगाने का विचार भी कर सकते हैं, पर यह तो दीर्घकाल में ही संभव होगा)। दूसरी ओर यदि किसी उद्योग के उत्पादन की माँग में कुछ कमी आती है तो उत्पादक कुछ अस्थायी मज़दूरों की छँटनी कर सकते हैं– कम से कम अधिक देर तक (overtime) काम तो अवश्य बंद हो जाएगा। दोनों ही अवस्थाओं में बाज़ार में वस्तुओं की माँग की दशाओं से ही श्रम की माँग के स्तर का निर्धारण होता है। इसी कारण हम कहते हैं कि श्रम की माँग तो व्युत्पन्न माँग (derived demand) होती है।

एक उत्पादक उतने ही श्रमिकों को काम पर लगाता है जो उसकी लागत की अपेक्षा कुल आगम में अधिक वृद्धि करते हैं। आप जानते ही हैं कि इस प्रकार की आगम वृद्धि को हमने पहले ही सीमांत आगम उत्पाद (MRP) का नाम दे रखा है। इसी प्रकार लागत वृद्धि को सीमांत मज़दूरी लागत (Marginal Wage Cost-MWC) कहा जाता है। हमारा सीमांत उत्पादिता सिद्धांत बताता है कि उत्पादक तब तक और श्रमिकों को काम देता रहेगा जब तक कि MRP का आकार MWC से अधिक रहता है। उसके संतुलन का निर्धारण MRP एवं MWC की समानता से होता है यथा : MRP = MWC

हम जानते ही हैं कि MRP श्रम की सीमांत भौतिक उत्पादिता एवं वस्तु बाज़ार में सीमांत आगम पर निर्भर करती है (देखे भाग 11.4)

यदि श्रम बाज़ार में पूर्ण प्रतियोगिता हो तो हमारा उत्पादक जितने श्रमिकों को चाहे बाज़ार मज़दूरी दर पर काम पर रख सकता है। अतः MWC बाज़ार मज़दूरी दर W के समान होगी। इसी से हम कहते हैं कि उत्पादक का संतुलन तभी होता जबकि पर MRP = W

यदि MRP > W हो तो उत्पादक और अधिक मज़दूर लगाकर और ज़्यादा मुनाफा कमा सकता है। यदि MRP < W तो वह मज़दूर घटाकर अपना घाटा कम कर पाएगा। जब MRP = W हो तो वह इस बिन्दु से दूर हटना अपने हितों के अनुकूल नहीं पाता। इस तरह से नीचे की ढलवां MRP वक्र की श्रम की माँग-वक्र का रूप धारण कर लेती है। यह दर्शाती है कि अगर मज़दूरी दर अधिक हो तो श्रम की माँग कम की जाएगी। दूसरी ओर मज़दूरी गिरने पर उत्पादक अधिक श्रमिकों को काम पर रखना चाहेंगे।

अन्य साधनों की मात्रा स्थिर रख अधिकारिक श्रम के प्रयोग के कारण उसकी सीमांत भौतिक उत्पादिता में कमी आने लगती है। इसी कारण MPP के साथ-साथ MRP भी दाहिनी ओर ढलवा हो जाती है। इसका कारण साधन के ह्रासमान प्रतिफल को ही माना जा सकता है। अतः, जैसे-जैसे MPP कम होती है, MRP = MPP × MR भी कम होने लगती है।

यदि वस्तु बाज़ार में कोई अपूर्णता हो, फिर तो MR भी स्थिर नहीं रह पाता। MR वक्र भी ह्रासमान AR वक्र से नीचे रहने लगता है। फिर तो MRP = MPP × MR और भी तेज़ी से नीचे गिरने लगती हैं।

11.8.1 श्रम बाज़ार : एक फर्म की श्रम की माँग से श्रम की बाज़ार माँग का निर्धारण

बाज़ार में श्रम की कुल माँग अथवा बाज़ार माँग का निर्धारण भाग 11.4.3 में वर्णित विधि से हो जाता है, अर्थात् विभिन्न फर्मों की माँगों को जोड़कर हम श्रम की बाज़ार माँग ज्ञात कर सकते हैं। पर हमें एक तथ्य का प्रावधान करना होगा : जैसे मज़दूरी दर में कमी आती है, सभी फर्में अधिक श्रमिकों को काम पर लगाना चाहती हैं। इस बढ़े हुए रोज़गार के फलस्वरूप उत्पादन में व्यापक वृद्धि होगी। यद्यपि पूर्ण प्रतियोगिता में कोई भी उत्पादक व्यक्तिगत रूप से बाज़ार माँग पर चाहे जितना उत्पादन बेच सकता है पर जब सभी उत्पादक ज़्यादा माल बेचना चाहेंगे तो बाज़ार आपूर्ति-वक्र बाहर की ओर खिसक जाएगी। इसके कारण बाज़ार कीमत घट जाएगी। अतः उत्पादन में वृद्धि सभी उत्पादकों को पहले से कम कीमत पर अपना माल बेचने को बाध्य कर देती हैं। MRP = MPP × MR तेज़ी से गिरने लगती हैं। इस कारण किसी भी उद्योग की श्रम के लिए माँग-वक्र उसकी घटक फर्मों की माँग-वक्रों के क्षैतिज योग की अपेक्षा कहीं अधिक तीखे ढाल वाली होगी।

11.8.2 श्रम की माँग की लोचशीलता

श्रम की माँग की मज़दूरी की दर के प्रति संवदेनशीलता ही श्रम की माँग की लोच कहलाती है।

$$E = \frac{\text{श्रम की माँग में प्रतिशत परिवर्तन}}{\text{मज़दूरी दर में प्रतिशत परिवर्तन}}$$

उपभोक्ता की किसी वस्तु के लिए माँग की भाँति ही यदि $E > 1$ तो हम श्रम की माँग को लोचशील कहते हैं। यदि $E < 1$ तो हम इसे लोचशील कहेंगे।

यदि श्रम की माँग की लोच एक (इकाई) हो तो फिर कुल मज़दूरी (Wage Bill) स्थिर रहती है। $E > 1$ होने पर मज़दूरी दर में गिरावट से कुल मज़दूरी में वृद्धि होती हैं जबकि $E < 1$ होने पर मज़दूरी दर में गिरावट के साथ-साथ कुल मज़दूरी कम हो जाती है।

11.9 माँग एवं आपूर्ति : बाज़ार संतुलन

11.9.1 उत्पाद एवं श्रम, दोनों ही बाज़ारों में पूर्ण प्रतियोगिता

श्रम सेवाओं के क्रेता एवं विक्रेता मिलकर श्रम बाज़ार की रचना करते हैं। श्रम के माँग एवं आपूर्ति-वक्र मिलकर बाज़ार के संतुलन का निर्धारण करते हैं। हमने भाग 11.7.3 में श्रम की आपूर्ति-वक्र का निर्धारण किया है। भाग 11.8.1 में हमने दाहिनी ओर ढलवा श्रम का माँग-वक्र प्राप्त किया हैं। हम चित्र 11.8 में माँग एवं आपूर्ति को एक साथ ले आए हैं। ये बिन्दु E पर एक-दूसरे को काटते हैं। अतः OW मज़दूरी दर पर श्रम की मात्रा OL का क्रय-विक्रय होता है। इसी बाज़ार मज़दूरी दर के आधार पर विभिन्न उत्पादक अपने-अपने MRP को MWC के समान कर अपने उत्पादन एवं रोज़गार का निर्धारण कर सकते हैं, जैसा कि हमने भाग 11.8 में उल्लेख किया है।

चित्र 11.8

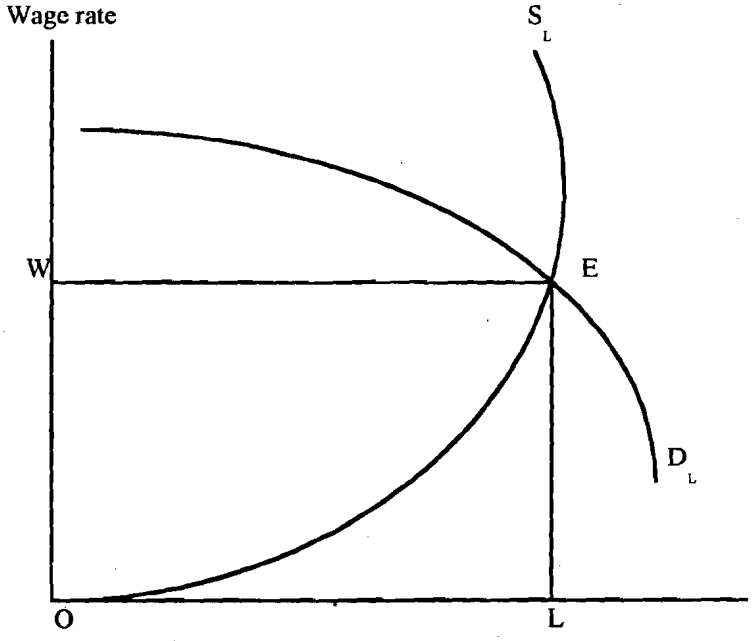

चित्र 11.8 माँग एवं आपूर्ति के संतुलन दिखाता है। अतः OW मज़दूरी दर पर श्रम की मात्रा OL में निर्धारण होता है।

यह ध्यान रहे कि हम अभी तक श्रम बाज़ार के बारे में पूर्ण प्रतियोगिता की पूर्व धारणा किए हुए हैं। प्रश्न यह उठता है कि यदि श्रम बाज़ार पूर्ण प्रतियोगिता की कसौटी पर खरा नहीं उतरे तो उसका क्या परिणाम होगा? फिर, श्रम बाज़ार प्रतियोगिता से दूर क्यों हट जाता है? इस प्रकार के प्रश्नों पर हम भाग 11.10 में विचार करेंगे।

बोध प्रश्न 3

1) आय प्रभाव से घंटों में श्रम की आपूर्ति बढ़ती/घटती है। जबकि प्रतिस्थापन प्रभाव से कार्य के घंटे बढ़ते/घटते हैं।

.....

.....

2) मज़दूरी वृद्धि का कुल प्रभाव निर्भर हैं :

क) आय प्रभाव पर,

ख) प्रतिस्थापन के प्रभाव पर, या

ग) आय एवं प्रतिस्थापन प्रभावों के सापेक्ष महत्त्व पर।

.....

.....

3) व्यक्तिगत श्रम आपूर्ति-वक्र की पीछे की ओर ढलवाँ होता है। क्यों? 50 शब्दों में व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) एक वाक्य में सीमांत मज़दूरी लागत का विचार समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5) कुल मज़दूरी में परिवर्तन क्या होगा, यदि मज़दूरी में वृद्धि हो जाए यथा :

क) श्रम की माँग बेलोच हो?

.....

.....

.....

.....

ख) श्रम की माँग लोचशील हो?

.....

.....

ग) श्रम की माँग की लोच एकिक (unit elasicity) हो?

.....

.....

11.10 बाज़ार की अपूर्णताएँ तथा मज़दूरी की दर

बाज़ार में कई प्रकार की मज़दूरी हो सकी हैं :

1) संभव है कि वस्तु बाज़ार में अपूर्णता हो – अर्थात् हमारा उत्पादक अन्यथा स्पर्धी उत्पादकों में से एक न होकर अपनी अलग पहचान रखता हो।

2) श्रम बाज़ार में भी अपूर्णताएँ संभव हैं। इसके कई स्रोत हो सकते हैं : हम जानते हैं कि आज का उत्पादक 19वीं सदी के छोटे से रोज़गारदाता जैसा नहीं है। अतिविशाल वित्तीय संसाधनों पर नियंत्रण और बड़े पैमाने पर उत्पादन करने वाला व्यक्ति संभवतः किसी क्षेत्र में एकमात्र रोज़गारदाता ही हो या फिर गिने-चुने रोज़गारदाताओं में से एक हो। अतः बाज़ार में उसकी शक्ति किसी एक रोज़गार की तलाश कर रहे मज़दूर की तुलना में बहुत ही अधिक होगी।

रोज़गारदाताओं की बाज़ार नियंत्रण शक्ति का सामना करने के ध्येय से ही श्रमिक संघों का गठन हुआ है। इन संघों की उपस्थिति बाज़ार में कुछ दूसरी तरह की अपूर्णताओं का कारण बन जाती है।

इस भाग में हम इन सभी संभावनाओं और इनके रोज़गार एंव मज़दूरी की दर के स्तर पर प्रभावों का विवेचन करेंगे।

11.10.1 वस्तु बाज़ार की अपूर्णताएँ

बाज़ार शक्ति होते हुए भी एक उत्पादक बाज़ार कीमत पर मनमानी मात्रा में माल नहीं बेच पाता– ज़्यादा माल बेचने के लिए उसे कीमत घटानी ही पड़ती है। अतः उसके उत्पाद की माँग-वक्र दाहिनी ओर ढलवा हो जाती है और अधिक श्रमिकों को रखने से उत्पादन में बढ़ोतरी भी अवश्य होती है। उत्पादक को अब बड़ी विलक्षण स्थिति का सामना करना पड़ता है– उसे न केवल अतिरिक्त उत्पादन के लिए कम कीमत स्वीकार करनी होगी बल्कि उसका सारा उत्पादन ही कम कीमत पर बिक पाता

है। अतः उसके लिए निर्णय प्रक्रिया की दृष्टि से VMP पूरी तरह अनुपयोगी हो जाती है। उसे अब MRP के आधार पर निर्णय लेने पड़ते हैं। अतः उसकी श्रम की माँग का VMP से नहीं बल्कि MRP से ही पता चलता है। यह MRP वक्र VMP से नीचे ही रहती हैं। अतः, बाज़ार मज़दूरी पर वह, चित्र 11.5 में दर्शाए अनुसार, अपेक्षाकृत कम मज़दूरों को रखेगा। आपको ध्यान होगा कि पूर्ण प्रतियोगिता में तो OW मज़दूरी पर OL_C श्रमिकों को काम मिलता किन्तु MRP के VMP नीचे चले जाने के कारण फर्म इस मज़दूरी दर पर केवल OL_N व्यक्तियों को काम दे पाती हैं।

अतः वस्तु बाज़ार में एकाधिकारिक उत्पादक किसी प्रतियोगी उत्पादक की तुलना में कम लोगों को काम प्रदान करेगा।

11.10.2 श्रम बाज़ार अपूर्णताएँ

क) श्रमिक संघ

श्रमिकों के संगठन बेहतर कार्यदशाओं के लिए प्रयास करते हैं। वे अपने सदस्यों को ज़्यादा मज़दूरी एवं अन्य सुविधाएँ दिलाने की कोशिश करते हैं। इस निमित्त वे नियोजकों को श्रम आपूर्ति पर अंकुश लगाने का प्रयास करते हैं। कहीं-कहीं वे सीमित भर्ती नीति (closed shop recruitment policy) मनवाने में भी सफल हो जाते हैं– अर्थात् फर्म में उत्पन्न खाली स्थान श्रमिक संघ के सदस्यों या उनके परिवारों में से ही भरे जाएँगे।

श्रमिक संघों के ये प्रयास उस समय अधिक सफल रहते हैं जबकि श्रम की माँग-वक्र के पीछे की ओर मुड़ते हुए भाग को काट रही हो।

ख) एक नियोजक (Monopolistic Employer)

जब बाज़ार में केवल एक ही नियोजक फर्म हो तो उसकी शक्ति बहुत बढ़ जाती है। मज़दूरों को वही स्वीकार करना पड़ जाता है जो कुछ वह फर्म दे रही हो। यहाँ तो मज़दूरी की दर एवं रोज़गार का स्तर दोनों ही कम रहते हैं।

ग) द्विपक्षीय एकाधिकार (Bilateral Monopolies)

इस अवस्था में तो एकमात्र नियोजक का सामना संगठित श्रमिक संघ से हो जाता है। फर्म रोज़गार एवं मज़दूरी को यथासंभव न्यूनतम रखना चाहती है, तो श्रमिक संघ मज़दूरी स्तर को अधिकतम स्तर तक ले जाने का प्रयास करता है। अन्ततः, फर्म एवं संघ की सौदेबाजी की क्षमता एवं कुशलता द्वारा ही संतुलन का निर्धारण हो पाता है। इन दशाओं में मज़दूरी दर कोई निश्चित दर नहीं रहती। यह श्रमिकों को स्वीकार्य न्यूनतम तथा उत्पादकों की इच्छित अधिकतम के बीच कहीं भी हो सकती है।

11.10.3 सरकारी हस्तक्षेप

कई बार सरकार भी श्रम बाज़ार में हस्तक्षेप करती है। यह किसी न्यूनतम मज़दूरी का निर्धारण कर देती है। सभी फर्में कम से कम उतना भुगतान अवश्य करने को बाध्य हो जाती हैं। यह न्यूनतम मज़दूरी तभी श्रमिकों को लाभ पहुँचा पाती है जबकि यह बाज़ार दर से ऊँची हो, और इसके कारण बड़े पैमाने पर मज़दूरों को निकालना शुरू न हो जाए।

सरकारी हस्तक्षेप का दूसरा स्वरूप आदर्श नियोजक का हो सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र में श्रमिकों को उपलब्ध मज़दूरी एवं अन्य सुविधाएँ धीरे-धीरे सारी अर्थव्यवस्था का मानक बन जाती हैं।

11.11 बाज़ार में अनेक प्रकार की मज़दूरी दरें क्यों प्रचलित होती हैं?

अभी तक हम मज़दूरी की दर निर्धारण की कुछ इस प्रकार बात करते हैं जैसे सारी अर्थव्यवस्था में एक ही दर होनी चाहिए। किन्तु कोई भी व्यक्ति सहज ही देख सकता है कि व्यवहार में तो बाज़ार में अनेक संख्या में मज़दूरी दरें प्रचलित होती हैं। इन दरों में अंतर छोटे-मोटे नहीं होते बल्कि बहुत ही भारी होते हैं। इन अंतरों की व्याख्या कैसे हो पाएगी? हम कह सकते हैं कि मज़दूरी दरों में अंतर निम्न कारणों से हो सकते हैं :

1) कार्यों में विषमताएँ होती हैं;

2) श्रमिकों में विषमताएँ होती हैं;

3) जानकारी अपूर्ण और महँगी होती है;

4) श्रम-गतिशीलता में रुकावटें होती हैं और स्थापना लागतें बहुत अधिक हैं।

कई बार हम मज़दूरी की दरों के अंतरों को मानवीय पूँजी की गुणवत्ता के आधार पर समझाते हैं :

i) श्रमिकों की योग्यताओं में अंतर होते हैं– इसी कारण उन्हें अलग-अलग आय प्राप्त होती है,

ii) कुछ व्यक्ति अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के आधार पर अधिक कमा पाने में सफल रहते हैं : किसी अमीर के बेटे-बेटी सहज ही उच्च तकनीकी शिक्षा पा सकते हैं; जबकि अति योग्य पर गरीब माँ-बाप की संतान को घर चलाने के लिए माँ-बाप की सहायता के नाम पर अध्ययन ही छोड़ देना पड़ता है;

iii) कुछ लोग जोख़िम उठाने को तत्पर रहते हैं– कई मामलों में उन्हें इसका समुचित पुरस्कार भी मिल जाता है।

हम इस बात को एक बार फिर जोर देकर दोहराना चाहते हैं कि किसी सीमा तक तो श्रमिक संघ मज़दूरी की दर को बढ़वा पाने में सफल हो जाते हैं, किन्तु यह वृद्धि केवल उन संघों के सदस्यों को ही लाभान्वित कर पाती है। ये संघ अर्थव्यवस्था के संगठित क्षेत्र तक ही सीमित हैं। इससे कहीं अधिक विशाल असंगठित क्षेत्र, जहाँ श्रम संघों का गठन इतना सहज नहीं होता, साझी सौदेबाज़ी द्वारा निर्धारित वृद्धि की संभावनाओं से वंचित रह जाता है।

बोध प्रश्न 4

1) "वस्तु बाज़ार में एकाधिकारी शक्ति प्राप्त उत्पादक अधिक/कम श्रमिकों को काम देता है"–क्यों? 50 शब्दों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) एक नियोजक फर्म एवं श्रमिक संघ का सामना होने पर मज़दूरी दर अनिवार्य (indeterminate) क्यों हो जाती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) श्रमिकों की आय में अंतरों की व्याख्या किन कारकों पर आधारित होती हैं? लगभग 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

11.12 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपको साधन कीमत निर्धारण से जुड़ी कुछ जानकारियाँ देने का प्रयास किया गया है। सीमांत उत्पादिता सिद्धांत अर्थशास्त्र के प्रमुख सिद्धांतों में से एक है। इसके अनुसार साधन एवं उत्पाद बाज़ारों में पूर्ण स्पर्धा होने पर प्रत्येक साधन का प्रतिफल उसकी सीमांत उत्पादिता के समान होगा। इस सिद्धांत को पूर्ण उत्पाद विभाजन प्रमेय से और बल मिला है, जिसके अनुसार यदि साधनों को उपर्युक्त विधि से पारिश्रमिक दिया जाए, तो सारा उत्पादन उन साधनों में पूरी तरह बँट जाता है। कुछ भी शेष नहीं बचा रहता।

किन्तु सीमांत उत्पादिता सिद्धांत भी आलोचनाओं से परे नहीं है। यह केवल साधन माँग पक्ष पर ही केंद्रित रह जाती है, आपूर्ति पक्ष की ओर इसका ध्यान ही नहीं जाता, जबकि कीमत निर्धारण में तो दोनों ही पक्षों पर विचार होना चाहिए। पूर्ण प्रतियोगिता पर निर्भरता भी इसकी अनेक समस्याओं का कारण बन जाती हैं, क्योंकि ऐसी बाज़ार व्यावहारिक जीवन में शायद ही कहीं देखने को मिल पाए।

माँग एवं आपूर्ति द्वारा निर्धारित संतुलन मज़दूरी दर में भी राजकीय हस्तक्षेप एवं श्रमिक संघों के क्रिया कलापों जैसे संस्थागत कारकों के आधार पर संशोधन आवश्यक हो जाते हैं।

11.13 शब्दावली

श्रम की पश्चगामी आपूर्ति-वक्र : एक निश्चित स्तर से मज़दूरी दर अधिक होने से मज़दूरी दर और श्रम आपूर्ति के बीच प्रत्यक्ष संबंध में बदल जाता

है। ऐसा प्रतिस्थापन प्रभाव पर आय प्रभाव के भारी पड़ने के कारण होता है।

प्रतियोगी बाज़ार : अनेक क्रेता-विक्रेताओं का बाज़ार जहाँ कोई भी क्रेता या विक्रेता बाज़ार कीमत पर नियंत्रण नहीं कर पाता।

आय प्रभाव : मज़दूरी वृद्धि से श्रमिक की आय बढ़ने पर वह श्रम सहित (अर्थात् अधिक विश्राम) सभी वस्तुओं का अधिक उपभोग करने को लालायित हो उठता है। अतः वह पहले की अपेक्षा कम घंटे काम करना चाहता है।

संस्थागत कारक : सामाजिक, राजनैतिक एवं संगठनात्मक कारक जिनका आर्थिक निर्णय प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है।

सीमांत भौतिक उत्पाद : उत्पादन की मात्रा में, अन्य सब बातें स्थिर रहने पर, केवल एक साधन की प्रयुक्त मात्रा में एक इकाई वृद्धि करने से आया अंतर।

सीमांत आगम उत्पाद : सीमांत भौतिक उत्पाद एवं सीमांत आगम का गुणनफल।

सीमांत उत्पाद मूल्य : सीमांत भौतिक एवं वस्तु की कीमत का गुणनफल।

न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम : सरकार द्वारा मज़दूरी की न्यूनतम दर का कानून द्वारा निर्धारण।

श्रम की गतिशीलता : श्रमिकों द्वारा एक रोज़गार से दूसरे रोज़गार व एक रोज़गार स्थान से दूसरे रोज़गार स्थान की ओर जाने की तत्परता।

ग़ैर प्रतियोगी बाज़ार : ऐसे बाज़ार जहाँ पूर्ण प्रतियोगिता की कोई न कोई शर्त पूरी नहीं हो पाती।

मौद्रिक मज़दूरी दर : तात्कालिक कीमतों पर आधारित मज़दूरी।

पूर्ण उत्पाद विभाजन प्रमेय : साधन की प्रत्येक इकाई को उस साधन की सीमांत उत्पादिता के समान प्रतिफल देने से सारा उत्पादन पूरी तरह विभाजित हो जाता है।

प्रतिस्थापन प्रभाव : मज़दूरी दर में वृद्धि से आराम, परित्याग की गई आय के रूप में, अधिक महँगा हो जाता है। इससे श्रमिक अधिक काम करने को प्रेरित होते हैं।

श्रमिक संघ : श्रमिकों का संगठन जो उनके हितों की रक्षा के लिए प्रयास करता है।

मज़दूरी के अंतर : श्रमिकों के विभिन्न समूहों की औसत आयों में अंतर।

11.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Boumol, W.I. and Blinder, A.S., 1988, *Economics: Principles and Policy*. Harcourt Brace Loronovieh, Chicago.

Stonier, A.W. and Hague, D.C., *A Text Book of Economics*, Macmillan and ELPS, London.

11.15 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत

बोध प्रश्न 1

1) अपने उत्तर के लिए भाग 11.3 को पढ़ें।

2) क) 2

   ख) 90 रुपये

   ग) 40 रुपये

बोध प्रश्न 2

1) MRP

2) वृद्धि, कमी

3) क) गलत

   ख) गलत

4) माँग, सीमांत, कीमत।